नासिरा शर्मा : समकालीन हिन्दी साहित्य में एक सशक्त स्त्री स्वर

गीतेश्वरी ताम्रकार[1], डॉ. सुमन बलियान[2]
[1]शोधार्थी, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
[2]शोध निर्देशक, प्राध्यापिका (हिंदी विभाग), भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र "नासिरा शर्मा : समकालीन हिन्दी साहित्य में एक सशक्त स्त्री स्वर" नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में निहित स्त्री-अस्मिता, सामाजिक चेतना और मानवीय संवेदनाओं का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें उनके लेखन में स्त्री के विविध रूपों, संघर्षशीलता, आत्मनिर्भरता तथा सांस्कृतिक सहअस्तित्व की अभिव्यक्ति को रेखांकित किया गया है। यह अध्ययन स्थापित करता है कि नासिरा शर्मा का साहित्य समकालीन स्त्री-विमर्श को नई दृष्टि, गहराई और वैचारिक दिशा प्रदान करता है।

प्रमुख शब्दावली (Keywords) – नासिरा शर्मा, स्त्री-विमर्श, स्त्री-अस्मिता, समकालीन हिन्दी साहित्य, स्त्री-चेतना, सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना, सांस्कृतिक सहअस्तित्व, आत्मनिर्भरता, पितृसत्तात्मक संरचना

प्रस्तावना

नासिरा शर्मा समकालीन हिन्दी साहित्य की उन विरल और विशिष्ट रचनाकारों में सम्मिलित हैं, जिनकी लेखनी ने न केवल कथा-साहित्य को वैचारिक गहराई प्रदान की है, बल्कि स्त्री-अस्मिता, सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदनाओं को एक व्यापक वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्थापित किया है। उनका साहित्य भारतीय समाज की जटिलताओं, सांस्कृतिक बहुलता, धार्मिक सहअस्तित्व तथा स्त्री-जीवन की विविध स्थितियों का सजीव और प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत करता है। नासिरा शर्मा का रचनात्मक व्यक्तित्व बहुआयामी है; वे कहानीकार, उपन्यासकार, पत्रकार, अनुवादक और सामाजिक सरोकारों से जुड़ी संवेदनशील चिंतक के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उनके लेखन में अनुभव की प्रामाणिकता, दृष्टि की व्यापकता और अभिव्यक्ति की सहजता का अद्वितीय संतुलन देखने को मिलता है, जो उन्हें समकालीन हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

प्रस्तुत शोध पत्र "नासिरा शर्मा : समकालीन हिन्दी साहित्य में एक सशक्त स्त्री स्वर" इसी वैचारिक और सृजनात्मक परिप्रेक्ष्य में उनके साहित्य का विश्लेषण करने का प्रयास है। यह शोध इस धारणा पर आधारित है कि नासिरा शर्मा का कथा-साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना का एक सशक्त माध्यम है। उनके लेखन में स्त्री केवल करुणा या सहानुभूति की पात्र नहीं, बल्कि एक आत्मसजग, संघर्षशील और स्वायत्त व्यक्तित्व के रूप में उभरती है, जो अपने अस्तित्व और अधिकारों के लिए निरंतर संघर्षरत है।

नासिरा शर्मा की रचनाओं में स्त्री-जीवन का चित्रण अत्यंत व्यापक और बहुआयामी है। उनकी स्त्रियाँ केवल घरेलू दायित्वों तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि वे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों में भी सक्रिय भूमिका निभाती हैं। वे कामकाजी हैं, शिक्षित हैं, आत्मनिर्भर हैं, किंतु साथ ही वे पारंपरिक बंधनों, सामाजिक रूढ़ियों और पितृसत्तात्मक संरचनाओं से जूझती हुई दिखाई देती हैं। इस प्रकार उनके साहित्य

में स्त्री जीवन का यथार्थपरक और संवेदनात्मक चित्रण मिलता है, जिसमें संघर्ष और संवेदना, पीड़ा और प्रतिरोध, परंपरा और परिवर्तन, सभी का संतुलित समन्वय उपस्थित है।

समकालीन हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श एक महत्वपूर्ण और व्यापक धारा के रूप में उभरा है, जिसने साहित्यिक चिंतन को नई दिशा और दृष्टि प्रदान की है। इस परिप्रेक्ष्य में नासिरा शर्मा का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उन्होंने स्त्री को केवल एक सामाजिक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि एक मानवीय सत्ता के रूप में देखा है। उनके साहित्य में स्त्री की अस्मिता, उसकी आत्मनिर्भरता, उसकी इच्छाएँ और उसकी संवेदनाएँ अत्यंत सशक्त रूप में अभिव्यक्त होती हैं। वे स्त्री को केवल अधिकारों की मांग करने वाली सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि अपने भीतर की शक्ति को पहचानने और उसे अभिव्यक्त करने वाली चेतना के रूप में प्रस्तुत करती हैं। नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उसमें सांस्कृतिक सहअस्तित्व और 'गंगा-जमुनी तहज़ीब' की गहरी छाप दिखाई देती है। उनके लेखन में विभिन्न धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों के बीच एक जीवंत संवाद स्थापित होता है, जो भारतीय समाज की वास्तविक बहुलता को अभिव्यक्त करता है। यह सांस्कृतिक समन्वय उनके स्त्री-चित्रण को और अधिक व्यापक और मानवीय बनाता है, जहाँ स्त्री केवल एक सामाजिक इकाई नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद की वाहक भी बन जाती है।

भाषा और शिल्प की दृष्टि से भी नासिरा शर्मा का कथा-साहित्य अत्यंत समृद्ध और प्रभावशाली है। उनकी भाषा में सहजता, प्रवाह और संप्रेषणीयता के साथ-साथ गहन संवेदनात्मकता और अभिव्यंजना की शक्ति भी विद्यमान है। वे बिम्ब, प्रतीक, मुहावरे और लोकोक्तियों के माध्यम से अपने कथ्य को अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करती हैं। उनकी शैली पाठक को केवल कथा सुनाती नहीं, बल्कि उसे पात्रों के अनुभवों और भावनाओं के साथ जोड़ देती है, जिससे पाठकीय संवेदना का विस्तार होता है। यह शोध पत्र नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में निहित स्त्री-चेतना, सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक संदर्भों का विश्लेषण करते हुए यह स्थापित करने का प्रयास करता है कि उनका साहित्य समकालीन हिन्दी साहित्य में एक सशक्त स्त्री स्वर के रूप में प्रतिष्ठित है। इसमें यह भी देखा जाएगा कि किस प्रकार उनके साहित्य में स्त्री के विभिन्न रूपों; संघर्षशील, आत्मनिर्भर, पीड़ित, विद्रोही और संवेदनशील, का चित्रण हुआ है, और यह चित्रण किस प्रकार व्यापक सामाजिक संरचना से जुड़ता है।

निष्कर्षतः, यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा का साहित्य केवल एक रचनात्मक उपलब्धि नहीं, बल्कि एक वैचारिक हस्तक्षेप है, जो समाज में व्याप्त असमानताओं, अन्याय और रूढ़ियों को चुनौती देता है। उनकी लेखनी स्त्री-अस्तित्व की गरिमा, स्वतंत्रता और स्वाभिमान की स्थापना का सशक्त माध्यम बनकर उभरती है। प्रस्तुत शोध पत्र इसी दृष्टि से उनके साहित्य का समग्र मूल्यांकन करते हुए यह प्रतिपादित करता है कि नासिरा शर्मा समकालीन हिन्दी साहित्य में एक सशक्त, संवेदनशील और प्रगतिशील स्त्री स्वर के रूप में स्थापित हैं, जिनका योगदान न केवल साहित्यिक, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

पूर्ववर्ती शोधों का अवलोकन

नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में स्त्री जीवन के अध्ययन को समझने के लिए पिछले तीन दशकों (लगभग 1990 के बाद) में विकसित स्त्री-विमर्श, हिन्दी कथा-परंपरा तथा आलोचनात्मक दृष्टियों का सम्यक् अवलोकन अत्यंत आवश्यक है। इस अवधि में हिन्दी साहित्य में स्त्री-अस्मिता, लैंगिक समानता, सामाजिक

न्याय तथा सांस्कृतिक पहचान के प्रश्नों ने व्यापक वैचारिक बहस का रूप ग्रहण किया है, जिसके आलोक में नासिरा शर्मा के साहित्य का मूल्यांकन और अधिक सार्थक हो जाता है।

इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक और उसके बाद के साहित्यिक परिदृश्य में स्त्री-विमर्श ने एक अधिक बहुआयामी और अंतर्विषयक रूप धारण किया है। समकालीन आलोचकों और शोधकर्ताओं ने स्त्री-अनुभव को केवल लैंगिक असमानता तक सीमित न रखकर उसे वर्ग, धर्म, भाषा और सांस्कृतिक पहचान के संदर्भ में भी समझने का प्रयास किया है। हाल के अध्ययनों में यह स्थापित किया गया है कि हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श अब केवल प्रतिरोध का विमर्श नहीं रह गया है, बल्कि वह पहचान, आत्मनिर्भरता और सांस्कृतिक संवाद का विमर्श बन चुका है। इसी संदर्भ में नासिरा शर्मा का साहित्य विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि उनके यहाँ स्त्री जीवन केवल संघर्ष का प्रतीक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक सहअस्तित्व और मानवीय संबंधों की पुनर्संरचना का माध्यम भी है।

इसी अवधि में हिन्दी की प्रमुख महिला रचनाकारों; जैसे *मैत्रेयी पुष्पा, चित्रा मुद्गल, मृदुला गर्ग* और *अनामिका,* के साहित्य में स्त्री की आत्मनिर्भरता, यौनिकता, सामाजिक बंधनों और ग्रामीण-शहरी विभाजन के प्रश्नों को नए आयामों के साथ प्रस्तुत किया गया है। विशेषतः मैत्रेयी पुष्पा ने अपने लेखन में ग्रामीण स्त्री के साहस, विद्रोह और आत्मसम्मान को अत्यंत मुखर रूप में अभिव्यक्त किया है, जो स्त्री-विमर्श को अधिक जमीनी और यथार्थपरक बनाता है । इसी प्रकार मन्नू भंडारी के कथा-साहित्य में मध्यवर्गीय स्त्री के मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, पारिवारिक संघर्ष और सामाजिक अपेक्षाओं का सूक्ष्म चित्रण मिलता है, जो स्त्री के आंतरिक जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित करता है ।

इक्कीसवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में स्त्री-विमर्श के साथ-साथ 'अस्मिता विमर्श' ने भी महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया, जिसमें दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यक स्त्रियों के अनुभवों को प्रमुखता दी गई। इस संदर्भ में हिन्दी साहित्य में हाशिये पर स्थित स्त्रियों के जीवन, उनकी वंचनाओं और संघर्षों को नए दृष्टिकोण से देखने का प्रयास हुआ। समकालीन लेखन में यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है कि स्त्री को एक समान इकाई के रूप में नहीं, बल्कि विविध सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में विभाजित अनुभवों के रूप में देखा जा रहा है।

पिछले दशक (2010 के बाद) में स्त्री-विमर्श का एक नया आयाम 'वैश्वीकरण' और 'डिजिटल युग' के संदर्भ में भी विकसित हुआ है। इस दौर में स्त्री की पहचान, उसकी स्वतंत्रता और उसकी सामाजिक भूमिका पर नए प्रश्न उठे हैं। शोधकर्ताओं ने यह भी इंगित किया है कि हिन्दी भाषा और साहित्य में लैंगिक पक्षपात की संरचनाएँ अब भी विद्यमान हैं, जिन्हें समझने और पुनर्संरचित करने की आवश्यकता है । यह दृष्टि नासिरा शर्मा के साहित्य को नए संदर्भ में पढ़ने की प्रेरणा देती है, जहाँ उनकी स्त्रियाँ पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के बीच संतुलन स्थापित करती हुई दिखाई देती हैं।

यदि हम 2000 के दशक की ओर दृष्टि डालें, तो इस समय स्त्री-विमर्श अधिक संगठित और सैद्धांतिक रूप में विकसित हुआ। इस दौर में स्त्री-अधिकार, लैंगिक समानता, शिक्षा, रोजगार और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दे साहित्यिक विमर्श के केंद्र में रहे। आलोचकों ने यह प्रतिपादित किया कि स्त्री को केवल सहानुभूति के पात्र के रूप में नहीं, बल्कि एक सक्रिय सामाजिक एजेंसी के रूप में देखना आवश्यक है। इस संदर्भ में नासिरा शर्मा का साहित्य अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि उनकी स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति सजग हैं और सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देती हैं।

1990 के दशक में स्त्री-विमर्श ने हिन्दी साहित्य में एक सशक्त वैचारिक आंदोलन का रूप लिया। इस समय *राजेन्द्र यादव, नामवर सिंह, मृणाल पांडे* आदि आलोचकों ने स्त्री-अस्मिता, लैंगिक असमानता और पितृसत्तात्मक संरचना पर गंभीर विचार प्रस्तुत किए। *राजेन्द्र यादव* ने विशेष रूप से स्त्री की पहचान को सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ते हुए यह स्पष्ट किया कि स्त्री की अस्मिता केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक अनुभवों से निर्मित होती है। इस दृष्टिकोण ने हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श को एक नई वैचारिक दिशा प्रदान की। इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर *सिमोन द बोउवार, जूडिथ बटलर* और *केट मिलेट* जैसे नारीवादी चिंतकों के सिद्धांतों का प्रभाव भी हिन्दी साहित्य पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन सिद्धांतों ने स्त्री की सामाजिक स्थिति, लैंगिक निर्माण और सत्ता-संबंधों की नई व्याख्या प्रस्तुत की, जिसने हिन्दी के साहित्यकारों को भी प्रभावित किया। नासिरा शर्मा के साहित्य में यह प्रभाव इस रूप में दिखाई देता है कि उनकी स्त्रियाँ केवल सामाजिक संरचनाओं का अनुसरण नहीं करतीं, बल्कि उन्हें प्रश्नांकित और परिवर्तित भी करती हैं। यद्यपि पिछले तीन दशकों में स्त्री-विमर्श पर व्यापक शोध कार्य हुए हैं, तथापि नासिरा शर्मा की कहानियों में स्त्री जीवन के समग्र और बहुआयामी विश्लेषण की अभी भी पर्याप्त संभावनाएँ विद्यमान हैं। अधिकांश अध्ययन उनके उपन्यासों या किसी एक विशिष्ट पहलू तक सीमित रहे हैं, जबकि उनकी कहानियों में स्त्री के विविध रूपों, मनोवैज्ञानिक द्वंद्वों, सांस्कृतिक संदर्भों और सामाजिक संघर्षों का अत्यंत समृद्ध और गहन चित्रण मिलता है।

अतः यह स्पष्ट होता है कि पिछले तीन दशकों में विकसित स्त्री-विमर्श की विभिन्न धाराएँ; अस्मिता विमर्श, सांस्कृतिक विमर्श, वैश्वीकरण और लैंगिक अध्ययन, नासिरा शर्मा के साहित्य को समझने के लिए एक व्यापक वैचारिक आधार प्रदान करती हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन इसी पृष्ठभूमि में नासिरा शर्मा की कहानियों में स्त्री जीवन का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, जिससे उनके साहित्य की नवीनता, प्रासंगिकता और वैचारिक गहराई को अधिक स्पष्ट रूप से समझा जा सके।

नासिरा शर्मा के कथा-संसार में स्त्री-विमर्श

समकालीन हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श एक सशक्त और गतिशील वैचारिक धारा के रूप में उभरा है, जिसने न केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति के स्वरूप को बदला है, बल्कि समाज में स्त्री की स्थिति, पहचान और अधिकारों के प्रश्नों को भी केंद्र में स्थापित किया है। इस परिप्रेक्ष्य में नासिरा शर्मा का कथा-संसार विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि उनकी रचनाओं में स्त्री केवल विमर्श का विषय नहीं, बल्कि एक जीवंत, चेतनशील और संघर्षशील सत्ता के रूप में उपस्थित होती है। उनका साहित्य स्त्री-अस्मिता, सामाजिक यथार्थ, सांस्कृतिक जटिलताओं और मानवीय संवेदनाओं का ऐसा समन्वित रूप प्रस्तुत करता है, जो उन्हें समकालीन हिन्दी कथा-परंपरा में विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

नासिरा शर्मा के कथा-संसार में स्त्री-विमर्श का स्वर अत्यंत संतुलित, मानवीय और यथार्थपरक है। वे स्त्री को केवल पीड़िता या शोषित के रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि उसके भीतर निहित आत्मबल, स्वाभिमान और प्रतिरोध की क्षमता को भी उजागर करती हैं। उनकी स्त्रियाँ जीवन की कठिन परिस्थितियों से जूझती हैं, सामाजिक बंधनों का सामना करती हैं, किन्तु वे अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयासरत रहती हैं। इस प्रकार उनके साहित्य में स्त्री-विमर्श केवल अधिकारों की मांग तक सीमित नहीं है, बल्कि आत्मबोध और आत्मनिर्माण की प्रक्रिया के रूप में विकसित होता है।

नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में स्त्री जीवन का चित्रण बहुआयामी है। उनकी रचनाओं में स्त्री के विविध

रूप; गृहिणी, कामकाजी महिला, परित्यक्ता, अकेली स्त्री, संघर्षशील स्त्री, शिक्षित और जागरूक स्त्री, समान रूप से उभरकर सामने आते हैं। यह विविधता इस तथ्य को स्पष्ट करती है कि स्त्री को किसी एक परिभाषा या भूमिका में सीमित नहीं किया जा सकता। उनके यहाँ स्त्री का जीवन परिस्थितियों, सामाजिक संरचनाओं और व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर निरंतर परिवर्तित होता रहता है। नासिरा शर्मा के कथा-संसार की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उन्होंने स्त्री को केवल पारिवारिक परिधि में सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे व्यापक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भों में प्रस्तुत किया है। उनकी स्त्रियाँ घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में सक्रिय हैं, वे आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हैं और अपने निर्णय स्वयं लेने का साहस रखती हैं। इसके बावजूद वे अनेक प्रकार की चुनौतियों और विरोधाभासों का सामना करती हैं, जो उनके जीवन को जटिल और संघर्षपूर्ण बनाते हैं।

स्त्री-विमर्श के संदर्भ में नासिरा शर्मा का दृष्टिकोण पितृसत्तात्मक व्यवस्था की आलोचना करता है, किन्तु वह एकतरफा या उग्र नहीं है। वे स्त्री-पुरुष संबंधों को संघर्ष के रूप में नहीं, बल्कि संवाद और सहअस्तित्व के रूप में देखने की दृष्टि प्रस्तुत करती हैं। उनके अनुसार समस्या किसी एक लिंग में नहीं, बल्कि उस सामाजिक मानसिकता में निहित है, जो असमानता और अन्याय को जन्म देती है। इस प्रकार उनका स्त्री-विमर्श एक संतुलित और समावेशी स्वर ग्रहण करता है, जो समाज में समानता और सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करता है। नासिरा शर्मा के साहित्य में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न अत्यंत केंद्रीय है। उनकी स्त्रियाँ अपने अस्तित्व, पहचान और आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करती हैं। वे अपने भीतर की शक्ति को पहचानती हैं और उसे अभिव्यक्त करने का प्रयास करती हैं। यह आत्मबोध ही उनके स्त्री-विमर्श की मूल प्रेरणा है। उनके पात्र यह स्पष्ट करते हैं कि स्त्री की मुक्ति केवल बाहरी परिस्थितियों के परिवर्तन से नहीं, बल्कि उसकी आंतरिक चेतना के जागरण से संभव है। उनके कथा-संसार में सांस्कृतिक सहअस्तित्व और 'गंगा-जमुनी तहज़ीब' का भी गहरा प्रभाव दिखाई देता है। यह सांस्कृतिक समन्वय उनके स्त्री-विमर्श को और अधिक व्यापक और मानवीय बनाता है। उनके यहाँ स्त्री केवल एक सामाजिक इकाई नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद की वाहक भी है, जो विभिन्न परंपराओं, धर्मों और मान्यताओं के बीच सेतु का कार्य करती है। इस प्रकार उनका साहित्य स्त्री को एक व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ में स्थापित करता है।

भाषा और शिल्प की दृष्टि से भी नासिरा शर्मा का कथा-संसार अत्यंत प्रभावशाली है। उनकी भाषा में सहजता, प्रवाह और संप्रेषणीयता के साथ-साथ गहन संवेदनात्मकता और अभिव्यंजना की शक्ति भी विद्यमान है। वे बिम्ब, प्रतीक, मुहावरे और लोकोक्तियों के माध्यम से स्त्री जीवन की जटिलताओं को अत्यंत सजीव और प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करती हैं। उनकी शैली पाठक को कथा के भीतर ले जाकर उसे पात्रों के अनुभवों से आत्मीय रूप से जोड़ देती है।

नासिरा शर्मा के कथा-संसार में स्त्री-विमर्श का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि उसमें स्त्री के मनोवैज्ञानिक आयामों का सूक्ष्म चित्रण मिलता है। उनकी स्त्रियाँ केवल बाहरी संघर्षों से ही नहीं, बल्कि आंतरिक द्वंद्वों, भावनात्मक उलझनों और मानसिक तनावों से भी जूझती हैं। यह मनोवैज्ञानिक गहराई उनके साहित्य को अधिक यथार्थपरक और प्रभावशाली बनाती है।

इसके अतिरिक्त, नासिरा शर्मा के साहित्य में स्त्री की आर्थिक स्थिति और आत्मनिर्भरता पर भी विशेष बल दिया गया है। उनकी स्त्रियाँ यह समझती हैं कि आर्थिक स्वतंत्रता ही उनके आत्मसम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार है। वे अपने श्रम और प्रतिभा के माध्यम से आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करती हैं, जो उनके

व्यक्तित्व को सशक्त बनाता है।

नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट पक्ष यह है कि उसमें मुस्लिम समाज की संरचना, उसकी अंतर्विरोधी प्रवृत्तियाँ तथा उस समाज के भीतर स्त्री की स्थिति और नियति का अत्यंत गहन, यथार्थपरक और संवेदनात्मक साक्षात्कार होता है। उनका लेखन केवल बाह्य सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं करता, बल्कि वह उस अंत:संसार को भी उद्घाटित करता है जहाँ स्त्री अपने अस्तित्व, अस्मिता और स्वतंत्रता के लिए निरंतर संघर्षरत रहती है। नासिरा शर्मा की रचनाओं में मुस्लिम समाज के भीतर व्याप्त परंपराओं, धार्मिक मान्यताओं और सांस्कृतिक अनुशासनों की जटिल संरचना के बीच स्त्री जीवन की त्रासदी, उसकी आकांक्षाएँ और उसकी जिजीविषा अत्यंत मार्मिक रूप में अभिव्यक्त होती है।

उनके उपन्यास; 'सात नदियाँ एक समंदर' (1984) से लेकर 'शाल्मली' (1987), 'ठीकरे की मंगनी' (1989), 'जिंदा मुहावरे' (1993), 'अक्षयवट', 'कुइयाँजान', 'जीरो रोड', 'अजनबी जजीरा' तथा साहित्य अकादमी से सम्मानित 'पारिजात', इन सभी कृतियों में स्त्री जीवन की विविध अवस्थाओं और संघर्षों का अत्यंत सशक्त चित्रण मिलता है। इन रचनाओं के माध्यम से नासिरा शर्मा ने यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है कि स्त्री के अधिकारों के मार्ग में खड़ी सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक सीमाएँ केवल परंपरा का संरक्षण नहीं करतीं, बल्कि कई बार वे उसके विकास और स्वतंत्र अस्तित्व में बाधा भी उत्पन्न करती हैं। अतः उनकी लेखनी इन हदबंदियों को तोड़ने का साहसिक प्रयास करती है और यह उद्घोष करती है कि स्त्री की स्वतंत्रता किसी भी प्रकार की रूढ़ मान्यताओं के अधीन नहीं हो सकती।

नासिरा शर्मा के कथा-संसार में स्त्री का संघर्ष केवल बाहरी परिस्थितियों से नहीं, बल्कि उन मानसिक और सांस्कृतिक बंधनों से भी है, जो उसे आत्मविश्वासहीन और निर्बल बनाने का प्रयास करते हैं। वे स्त्री के भीतर निहित उस शक्ति को पहचानती हैं, जो उसे हर विपरीत परिस्थिति में भी अपने व्यक्तित्व को बचाए रखने का संबल देती है। उनके पात्र टूटते हैं, बिखरते हैं, किंतु वे पूर्णतः आत्मसमर्पण नहीं करते। वे समझौतों की उस सीमारेखा को अस्वीकार करते हैं, जहाँ उनका स्वाभिमान और अस्तित्व संकट में पड़ता है। इस दृष्टि से नासिरा शर्मा का स्त्री-विमर्श अत्यंत दृढ़, आत्मसम्मानपरक और मानवीय गरिमा से ओत-प्रोत है। यह भी उल्लेखनीय है कि नासिरा शर्मा ने स्त्री की पीड़ा को किसी एक धर्म या समाज तक सीमित नहीं रखा है। वे यह स्वीकार करती हैं कि स्त्री की यातना केवल हिन्दू समाज की समस्या नहीं है, बल्कि मुस्लिम समाज में भी उसकी स्थिति कई बार अधिक जटिल और दयनीय रूप में सामने आती है। यहाँ धर्म और संस्कारों की जकड़बंदी अपेक्षाकृत अधिक कठोर है, जिससे स्त्री की स्वतंत्रता और स्वायत्तता पर अतिरिक्त नियंत्रण स्थापित हो जाता है। तथापि, नासिरा शर्मा इस यथार्थ को किसी पूर्वाग्रह या आरोप के रूप में नहीं, बल्कि एक संतुलित और विश्लेषणात्मक दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं।

उनकी विशेषता यह है कि वे मुस्लिम समाज के जीवनगत संस्कारों, पारिवारिक संरचनाओं और सांस्कृतिक परिवेश के भीतर स्त्री-विरोधी प्रवृत्तियों का अत्यंत सूक्ष्म और समग्र चित्रण करती हैं। यह चित्रण न तो एकांगी है और न ही भावनात्मक अतिरंजन से युक्त, बल्कि उसमें यथार्थ की ठोस जमीन और अनुभव की प्रामाणिकता विद्यमान है। इस दृष्टि से उनका लेखन उन अनेक स्त्री-केंद्रित रचनाओं से भिन्न है, जो केवल व्यक्तिगत अनुभवों या आत्मकथात्मक स्वर तक सीमित रह जाती हैं। नासिरा शर्मा का दृष्टिकोण व्यापक सामाजिक संरचना को समेटते हुए स्त्री जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित करता है। हालाँकि यह भी देखा गया है कि उनकी कहानियों और उपन्यासों में स्त्रियाँ कई बार ऐसे मोड़ पर पहुँच जाती हैं, जहाँ उनके संघर्ष

की पराकाष्ठा उन्हें टूटन की स्थिति तक ले जाती है। यह टूटन केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दबावों का परिणाम होती है। किन्तु नासिरा शर्मा इस स्थिति को केवल निराशा या पराजय के रूप में नहीं प्रस्तुत करतीं, बल्कि उसे एक चेतावनी और प्रश्न के रूप में सामने लाती हैं, ऐसा प्रश्न, जो समाज की संवेदनहीनता और उसकी संरचनात्मक असमानताओं को चुनौती देता है।

नासिरा शर्मा के उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' के संदर्भ में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि वहाँ स्त्री के विद्रोह और उसकी स्वतंत्रता की आकांक्षा का सशक्त चित्रण तो मिलता है, किन्तु उस विद्रोह की अंतिम परिणति अथवा उसके लिए कोई ठोस, व्यवस्थित सामाजिक मार्ग स्पष्ट रूप में सामने नहीं आता। यह स्थिति उनके समग्र कथा-साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता भी है, जहाँ वे स्त्री की अस्मिता और स्वाधीनता की प्रबल पक्षधर होते हुए भी उसे किसी अराजक या उच्छृंखल स्वतंत्रता की ओर नहीं ले जातीं। नासिरा शर्मा दांपत्य संबंधों में स्त्री की गौणता को स्वीकार करने से स्पष्ट रूप से इनकार करती हैं और उसे समान अधिकारों, सम्मान तथा आत्मनिर्णय की स्वतंत्रता प्रदान करने की वकालत करती हैं।

उनकी दृष्टि में स्त्री केवल संबंधों का निर्वाह करने वाली निष्क्रिय सत्ता नहीं है, बल्कि वह एक सजग, संवेदनशील और निर्णयक्षम व्यक्तित्व है, जो अपने जीवन के संबंधों को पुनर्परिभाषित करने की क्षमता रखती है। तथापि, यह प्रश्न अपनी जगह बना रहता है कि जब स्त्री किसी स्थापित सामाजिक ढाँचे के विरुद्ध विद्रोह करती है, तो वह अंततः किस दिशा में अग्रसर होती है। नासिरा शर्मा इस प्रश्न का कोई एकरेखीय या सैद्धांतिक उत्तर प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि उसे एक खुला प्रश्न बनाकर पाठक के समक्ष छोड़ देती हैं। यही उनकी रचनात्मकता की विशेषता भी है, जहाँ समाधान थोपे नहीं जाते, बल्कि संभावनाओं के रूप में उभरते हैं। इसके बावजूद यह उल्लेखनीय है कि नासिरा शर्मा की स्त्रियाँ विद्रोह के चरम पर पहुँचकर भी परिवारहीनता या पूर्ण विघटन के सीमांत को स्पर्श नहीं करतीं। वे संबंधों को पूरी तरह अस्वीकार नहीं करतीं, बल्कि उन्हें नए आधारों पर पुनर्संगठित करने का प्रयास करती हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि लेखिका परिवार संस्था के पूर्ण विघटन की पक्षधर नहीं हैं, बल्कि वह उसमें निहित असमानताओं और अन्याय को समाप्त कर उसे अधिक न्यायपूर्ण और संतुलित स्वरूप में देखने की आकांक्षी हैं। इस दृष्टि से उनका स्त्री-विमर्श मर्यादित स्वतंत्रता का समर्थन करता है, ऐसी स्वतंत्रता, जो आत्मसम्मान और अधिकारों की स्थापना तो करती है, किन्तु सामाजिक संरचना के पूर्ण विघटन की ओर नहीं जाती।

नासिरा शर्मा की स्त्रियों में जो आवेग, विद्रोह और आत्मसंघर्ष दिखाई देता है, उसे केवल तत्कालीन परिणामों के आधार पर नहीं, बल्कि भविष्य की संभावनाओं के संदर्भ में समझना आवश्यक है। उनके पात्र उस संक्रमणकालीन समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं, जहाँ परंपरा और आधुनिकता के बीच द्वंद्व चल रहा है। इस द्वंद्व के भीतर स्त्री अपनी नई पहचान गढ़ने का प्रयास कर रही है। इस प्रक्रिया में उसका संघर्ष कभी-कभी अनिश्चित और दिशाहीन प्रतीत हो सकता है, किन्तु यही संघर्ष भविष्य के एक ऐसे समाज की नींव रखता है, जहाँ स्त्री और पुरुष के बीच सहयोग, समानता और पारस्परिक सम्मान पर आधारित संबंध विकसित हो सकें। नासिरा शर्मा की कृति 'औरत के लिए औरत' को इसी संभावनाशील समाज की प्रस्तावना के रूप में देखा जा सकता है। इस रचना में स्त्री-समर्थन, स्त्री-एकजुटता और स्त्री-चेतना के जिस रूप का उद्घाटन होता है, वह यह संकेत देता है कि स्त्री की मुक्ति केवल व्यक्तिगत संघर्ष से नहीं, बल्कि सामूहिक जागरूकता और सहयोग से संभव है। इस प्रकार उनका साहित्य स्त्री-विमर्श को एक व्यापक सामाजिक आंदोलन के रूप में देखने की प्रेरणा देता है। यह भी स्पष्ट है कि नासिरा शर्मा उस आत्यंतिक स्वतंत्रता के पक्ष में नहीं हैं,

जो परिवार और समाज के विघटन की ओर ले जाती है। वे स्वतंत्रता और जिम्मेदारी के बीच संतुलन स्थापित करने की पक्षधर हैं। उनके अनुसार वास्तविक स्वतंत्रता वही है, जो व्यक्ति को आत्मसम्मान के साथ जीने की क्षमता प्रदान करे, किन्तु साथ ही सामाजिक संबंधों की मर्यादा और सामूहिक जीवन के मूल्यों को भी बनाए रखे।

उनके उपन्यासों में कई स्थानों पर लेखिका का आक्रोश और असंतोष भी मुखर रूप में सामने आता है, विशेषतः उन स्थितियों के प्रति, जहाँ स्त्री को अन्याय और असमानता का सामना करना पड़ता है। तथापि, यह भी देखा गया है कि कुछ प्रसंगों में वे उन जटिल प्रश्नों से प्रत्यक्ष टकराव से बचती हुई प्रतीत होती हैं, जो राजनीतिक और धार्मिक स्तर पर व्यापक रूप से विद्यमान हैं और जिनका प्रभाव पूरे मुस्लिम समाज पर पड़ता है। यह संभवतः उनकी रचनात्मक रणनीति का हिस्सा है, जहाँ वे प्रत्यक्ष वैचारिक टकराव के बजाय मानवीय अनुभवों और जीवन-स्थितियों के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त करना अधिक उपयुक्त समझती हैं। फिर भी, इसमें कोई संदेह नहीं कि नासिरा शर्मा के लेखन में मुस्लिम समाज और उसमें स्त्रियों की स्थिति का अत्यंत व्यापक, गहन और यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि स्त्री के अधिकारों के मार्ग में आने वाली सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक सीमाएँ अपरिवर्तनीय नहीं हैं, बल्कि उन्हें चुनौती दी जा सकती है और परिवर्तित भी किया जा सकता है। उनका साहित्य इस बात की उद्घोषणा करता है कि स्त्री की स्वतंत्रता किसी भी प्रकार की रूढ़ियों या परंपरागत बंधनों के अधीन नहीं हो सकती।

नासिरा शर्मा के उपन्यास-संसार में सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के बीच मनुष्य; विशेषतः स्त्री, की बदलती नियति का अत्यंत गहन और यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनके लेखन में केवल व्यक्तिगत जीवन की कथा नहीं, बल्कि व्यापक सामाजिक संरचना, सत्ता-व्यवस्था, आर्थिक मूल्यों और मानवीय संबंधों के विघटन की जटिल प्रक्रियाएँ भी सशक्त रूप में अभिव्यक्त होती हैं। उनके प्रथम उपन्यास 'सात नदियाँ एक समंदर' में यह दृष्टि स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती है, जहाँ वे ईरानी समाज के राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तनों के बीच आम जनता; विशेषतः स्त्रियों, की विवशताओं और संघर्षों का चित्रण करती हैं। रजा शाह पहलवी के विरुद्ध जनविद्रोह, उससे मुक्ति की आकांक्षा, अयातुल्ला खुमैनी के शासन की स्थापना और उसके बाद उत्पन्न नई तानाशाही, इन सभी घटनाओं के माध्यम से नासिरा शर्मा यह दर्शाती हैं कि सत्ता परिवर्तन मात्र से जनता की वास्तविक मुक्ति संभव नहीं हो पाती। इस प्रक्रिया में स्त्री का जीवन निरंतर दमन और असुरक्षा के घेरे में रहता है। इस प्रकार यह उपन्यास सत्ता-संरचनाओं के भीतर स्त्री की असहायता और उसके संघर्षशील अस्तित्व का मार्मिक दस्तावेज बन जाता है।

इसी प्रकार 'शाल्मली' उपन्यास में नासिरा शर्मा भारतीय; विशेषतः हिन्दू, समाज में दांपत्य संबंधों की जटिलता और उसमें स्त्री की स्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं। यहाँ दांपत्य जीवन के विघटन का एक प्रमुख कारण 'अर्थ' को बताया गया है। उपन्यास का पात्र नरेश, जो एक सेक्शन ऑफिसर है, विवाह जैसे पवित्र संबंध को भी आर्थिक दृष्टिकोण से देखने लगता है। उसके लिए शिक्षित स्त्री केवल जीवनसंगिनी नहीं, बल्कि 'धन उत्पन्न करने की मशीन' बन जाती है। इस मानसिकता के कारण दांपत्य संबंधों की आत्मीयता और संवेदनात्मकता क्षीण होती जाती है।

नरेश के भीतर यह भय भी निरंतर बना रहता है कि शाल्मली का व्यक्तित्व उसके अपने व्यक्तित्व से अधिक सशक्त न हो जाए। यह भय दरअसल उस पितृसत्तात्मक मानसिकता का प्रतीक है, जो स्त्री की उन्नति को

अपने वर्चस्व के लिए खतरा मानती है। वह शाल्मली को नियंत्रित रखने की चेष्टा करता है, ताकि वह उसके द्वारा प्राप्त सुविधाओं से वंचित न हो जाए। इस प्रकार नासिरा शर्मा यह स्पष्ट करती हैं कि जब दांपत्य संबंधों का आधार नैतिकता, प्रेम और विश्वास के स्थान पर अर्थ और स्वार्थ बन जाता है, तो संबंधों का विघटन अनिवार्य हो जाता है।

'ठीकरे की मंगनी' में नासिरा शर्मा स्त्री जीवन की पीड़ा को और अधिक तीव्रता से प्रस्तुत करती हैं। यहाँ यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि स्त्री की यातना केवल हिन्दू समाज तक सीमित नहीं है, बल्कि मुस्लिम समाज में उसकी स्थिति कई बार अधिक जटिल और दयनीय हो जाती है। उपन्यास का पात्र रफत इस युगीन प्रवृत्ति का प्रतिनिधि है, जो व्यक्तिगत स्वार्थ और भौतिक सुख-सुविधाओं के लिए अपने संबंधों तक को त्यागने में संकोच नहीं करता। महरूख का मंगेतर होते हुए भी वह अमेरिका जाकर वैलरी के साथ संबंध स्थापित करता है, केवल इसलिए कि वह उसके आर्थिक खर्चों का वहन करती है।

यह प्रसंग यह स्पष्ट करता है कि उपभोक्तावादी प्रवृत्ति और ऐश्वर्य की लालसा ने मानवीय संबंधों की आत्मीयता को किस प्रकार क्षीण कर दिया है। रिश्ते अब भावनात्मक आधार पर नहीं, बल्कि उपयोगिता और स्वार्थ के आधार पर निर्मित होने लगे हैं। इस परिवेश में महरूख का संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि अस्तित्वगत है। वह उपेक्षा और हाशियाकरण के बावजूद अपने अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास करती है, जो उसे एक सशक्त स्त्री पात्र के रूप में प्रतिष्ठित करता है। इसी प्रवृत्ति का एक और रूप 'जिंदा मुहावरे' में दिखाई देता है, जहाँ निजाम का चरित्र आधुनिक उपभोक्तावादी समाज की विडंबनाओं को उद्घाटित करता है। वह धन-संचय में इतना लिप्त हो जाता है कि अपने अतीत, अपने परिवार और अपनी भावनात्मक स्मृतियों से कट जाता है। कराँची आने के बाद उसका जीवन पूरी तरह व्यापारिक गतिविधियों में उलझ जाता है, जिससे वह अपने पारिवारिक संबंधों से दूर होता चला जाता है। निजाम की पत्नी सबीना इस स्थिति को गहराई से अनुभव करती है। वह अपने पति से अपने सुख-दुःख साझा करने में स्वयं को असमर्थ पाती है, क्योंकि निजाम अब केवल उसका नहीं रह गया है, बल्कि बाजार और व्यापार की दुनिया का हिस्सा बन चुका है। उसके लिए भावनाएँ, संवेदनाएँ और संबंध 'लिजलिजे शब्द' बनकर रह जाते हैं। इस प्रकार नासिरा शर्मा यह संकेत देती हैं कि उपभोक्तावादी संस्कृति ने मनुष्य को उसके मानवीय गुणों से दूर कर दिया है और उसे एक यांत्रिक अस्तित्व में परिवर्तित कर दिया है।

नासिरा शर्मा के उपन्यास-साहित्य में आधुनिक युग की आर्थिक प्रवृत्तियों के प्रभाव से मानवीय संबंधों में उत्पन्न विघटन और मूल्य-स्खलन का अत्यंत सूक्ष्म तथा यथार्थपरक चित्रण मिलता है। विशेषतः 'अक्षयवट' और 'कुइयाँजान' जैसे उपन्यास इस तथ्य को सशक्त रूप से उद्घाटित करते हैं कि आज का समाज केवल दाम्पत्य संबंधों तक ही नहीं, बल्कि रक्त-संबंधों तक भी 'अर्थ' की कसौटी पर उन्हें परखने लगा है।

'अक्षयवट' में नासिरा शर्मा यह सिद्ध करती हैं कि आधुनिकता और उपभोक्तावाद के प्रभाव ने पारिवारिक संबंधों की मूल आत्मा को गहराई से प्रभावित किया है। जहाँ पहले माता-पिता, भाई-बहन जैसे संबंध प्रेम, विश्वास और त्याग पर आधारित होते थे, वहीं अब उनमें स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा और आर्थिक हितों का प्रवेश हो गया है। पैतृक संपत्ति और धन-संपदा की प्राप्ति की लालसा ने मानवीय संवेदनाओं को इस हद तक क्षीण कर दिया है कि संतान अपने ही माता-पिता तथा भाई-बहनों के विरुद्ध हिंसक प्रवृत्तियों तक उतर आती है। यह स्थिति केवल सामाजिक विकृति का द्योतक नहीं है, बल्कि यह उस गहरे नैतिक संकट का संकेत भी है, जिसमें आधुनिक मनुष्य फँसता जा रहा है।

नासिरा शर्मा इस उपन्यास के माध्यम से यह स्पष्ट करती हैं कि जब संबंधों का आधार 'अर्थ' बन जाता है, तो उनमें निहित आत्मीयता, करुणा और त्याग की भावनाएँ धीरे-धीरे समाप्त होने लगती हैं। परिवार, जो कभी भावनात्मक सुरक्षा और नैतिक मूल्यों का केंद्र हुआ करता था, अब स्वार्थों के टकराव का क्षेत्र बनता जा रहा है। इस प्रकार 'अक्षयवट' केवल एक पारिवारिक कथा नहीं, बल्कि आधुनिक समाज के नैतिक पतन और संबंधों के विघटन का सशक्त सामाजिक दस्तावेज बनकर उभरता है।

इसी प्रवृत्ति का एक और मार्मिक चित्रण 'कुइयाँजान' उपन्यास में देखने को मिलता है, जहाँ बहन-बहन के संबंधों में आए परिवर्तन को अत्यंत सूक्ष्मता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में शकरआरा और खुरशीदआरा के संबंध इस परिवर्तनशील सामाजिक यथार्थ को प्रतिबिंबित करते हैं। शकरआरा, जो बड़ी बहन है और एक उच्च पदस्थ आई.ए.एस. अधिकारी की पत्नी है, आर्थिक समृद्धि और सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण अहंकार से भर जाती है। यह अहंकार उसे अपनी ही बहन से भावनात्मक रूप से दूर कर देता है, जिससे पारिवारिक आत्मीयता का क्षरण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। किन्तु समय के साथ जब परिस्थितियाँ बदलती हैं और उसे अपने पुत्र के लिए अस्पताल स्थापित करने हेतु अधिक धन की आवश्यकता पड़ती है, तब वही शकरआरा अपनी बहन की ओर सहायता के लिए हाथ बढ़ाती है। यह प्रसंग इस बात को अत्यंत प्रभावी ढंग से उजागर करता है कि आधुनिक भौतिकवादी परिवेश में संबंधों का मूल्य स्थायी नहीं रह गया है, बल्कि वह परिस्थितियों और स्वार्थों के अनुसार बदलता रहता है। नासिरा शर्मा इस चित्रण के माध्यम से यह संकेत देती हैं कि आज के समाज में संबंधों की वास्तविकता और उनकी गहराई पर प्रश्नचिह्न लगने लगे हैं। रिश्ते अब केवल भावनात्मक बंधन नहीं रह गए, बल्कि वे कई बार औपचारिकता और दिखावे तक सीमित होकर रह जाते हैं। भौतिक सुख-सुविधाओं की अंधी दौड़ ने मनुष्य को इतना आत्मकेन्द्रित बना दिया है कि वह अपने सबसे निकट के संबंधों की भी उपेक्षा करने लगा है।

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा के इन उपन्यासों में आधुनिक समाज की वह त्रासदी उजागर होती है, जहाँ 'अर्थ' ने 'मूल्य' का स्थान ले लिया है और मानवीय संबंधों की आत्मा धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही है। उनके लेखन में यह स्पष्ट चेतावनी निहित है कि यदि यह प्रवृत्ति इसी प्रकार बढ़ती रही, तो समाज में प्रेम, विश्वास और त्याग जैसे मानवीय गुणों का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा। इस प्रकार उनका साहित्य केवल यथार्थ का चित्रण नहीं करता, बल्कि वह समाज को आत्ममंथन के लिए भी प्रेरित करता है।

निष्कर्ष

नासिरा शर्मा के कथा-संसार में स्त्री-विमर्श एक बहुआयामी, संवेदनात्मक तथा वैचारिक रूप में उभरकर सामने आता है, जो समकालीन हिन्दी साहित्य को न केवल नई दिशा प्रदान करता है, बल्कि स्त्री-अस्तित्व के गहन प्रश्नों को भी अत्यंत प्रखरता के साथ उद्घाटित करता है। उनके साहित्य का समग्र अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि नासिरा शर्मा ने स्त्री को किसी एक सीमित परिभाषा या भूमिका में नहीं बाँधा, बल्कि उसे जीवन के विविध आयामों में उसकी संपूर्ण जटिलता और यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है।

उनकी रचनाओं में स्त्री केवल पीड़िता या शोषित नहीं है, बल्कि वह एक सजग, संवेदनशील और संघर्षशील सत्ता के रूप में उपस्थित होती है, जो अपने अधिकारों, अस्मिता और आत्मसम्मान के लिए निरंतर प्रयत्नशील है। यह स्त्री पारंपरिक बंधनों को चुनौती देती है, किन्तु पूर्णतः विद्रोही होकर सामाजिक संरचना को ध्वस्त करने के बजाय वह संतुलन और सह-अस्तित्व की राह भी तलाशती है। यही कारण है कि नासिरा शर्मा का स्त्री-विमर्श अतिवादी न होकर एक यथार्थवादी और मानवीय दृष्टिकोण से संपन्न दिखाई देता है।

नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में स्त्री के विविध रूपों; कामकाजी, घरेलू, अकेली, उपेक्षित, महत्वाकांक्षी तथा संघर्षरत, का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण मिलता है। उनके पात्र सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संरचनाओं के भीतर रहते हुए भी अपनी स्वतंत्र पहचान निर्मित करने का प्रयास करते हैं। विशेष रूप से मुस्लिम समाज की पृष्ठभूमि में स्त्री की स्थिति का जो सूक्ष्म और गहन चित्रण उन्होंने किया है, वह हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट योगदान के रूप में देखा जा सकता है। उन्होंने धर्म और परंपराओं की आड़ में स्त्री पर लगाए गए प्रतिबंधों को उजागर करते हुए यह सिद्ध किया है कि स्त्री की स्वतंत्रता केवल सामाजिक सुधार का विषय नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा का प्रश्न है।

उनके उपन्यासों और कहानियों में यह तथ्य बार-बार उभरकर सामने आता है कि आधुनिक समाज में आर्थिक मूल्यों और उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों ने मानवीय संबंधों को गहराई से प्रभावित किया है। इस परिवर्तन का सबसे अधिक प्रभाव स्त्री जीवन पर पड़ता है, जहाँ वह एक ओर पारंपरिक अपेक्षाओं से बंधी होती है और दूसरी ओर आधुनिकता की नई चुनौतियों से जूझती है। नासिरा शर्मा इस द्वंद्व को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ चित्रित करती हैं और यह दिखाती हैं कि स्त्री इस जटिल परिस्थिति में भी अपनी पहचान और अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत रहती है।

उनका स्त्री-विमर्श केवल व्यक्तिगत पीड़ा का आख्यान नहीं है, बल्कि वह व्यापक सामाजिक संदर्भों से जुड़ा हुआ है। उनके पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री की मुक्ति केवल बाह्य बंधनों से मुक्त होने में नहीं, बल्कि आत्मबोध, आत्मनिर्णय और आत्मसम्मान की प्राप्ति में निहित है। वे स्त्री को एक स्वतंत्र चेतना के रूप में स्थापित करती हैं, जो अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेने में सक्षम है।

इस शोध के आधार पर यह निष्कर्ष भी सामने आता है कि नासिरा शर्मा का स्त्री-विमर्श संघर्ष और संवेदना के साथ-साथ आशा और संभावनाओं का भी द्योतक है। उनकी स्त्रियाँ टूटती अवश्य हैं, किन्तु वे पुनः स्वयं को संयोजित कर आगे बढ़ने का साहस भी रखती हैं। वे पराजय को अंतिम सत्य नहीं मानतीं, बल्कि उसे अपने संघर्ष की नई शुरुआत के रूप में देखती हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा का कथा-साहित्य स्त्री-अस्मिता के प्रश्नों को एक व्यापक मानवीय परिप्रेक्ष्य में स्थापित करता है। उनका लेखन यह सिद्ध करता है कि स्त्री-विमर्श केवल अधिकारों की मांग तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक समतामूलक, संवेदनशील और मानवीय समाज के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। उनके साहित्य में स्त्री के संघर्ष, संवेदना और स्वप्न, तीनों का जो सशक्त समन्वय मिलता है, वही उनके रचना-संसार की सबसे बड़ी विशेषता और प्रासंगिकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. नासिरा शर्मा. (1984). *सात नदियाँ एक समंदर.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
2. नासिरा शर्मा. (1987). *शाल्मली.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
3. नासिरा शर्मा. (1989). *ठीकरे की मंगनी.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
4. नासिरा शर्मा. (1993). *जिंदा मुहावरे.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
5. नासिरा शर्मा. (2003). *अक्षयवट.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
6. नासिरा शर्मा. (2005). *कुइयाँजान.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
7. नासिरा शर्मा. (2008). *अजनबी जज़ीरा.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।

8. नासिरा शर्मा. (2011). *जीरो रोड.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
9. नासिरा शर्मा. (2014). *पारिजात.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
10. नासिरा शर्मा. (2017). *दूसरी जन्नत.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
11. यादव, राजेन्द्र. (2001). *हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
12. देवसेन, रमेश. (2010). *समकालीन हिन्दी कथा साहित्य और स्त्री चेतना.* दिल्ली: साहित्य भवन।
13. शर्मा, मीना. (2015). *हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता.* जयपुर: पंचशील प्रकाशन।
14. तिवारी, सुशील कुमार. (2018). *आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन.* इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
15. सिंह, अर्चना. (2020). *समकालीन महिला लेखन और स्त्री विमर्श.* नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान।